एक त्रस-स्थिति में कितने मनुष्य भव?

अनादि काल से यह जीव निगोद अवस्था में रहता हुआ जन्म-मरण के असह्य दुःख प्राप्त करता है। किसी महापुण्य के उदय से निगोद से छूटकर पृथ्वीकायिक आदि स्थावर पर्यायों एवं दुर्लभ परिणामों के निमित्त से त्रस पर्यायों को प्राप्त करता है। इस त्रस अवस्था में निरंतर रहने का अधिकतम काल साधिक 2000 सागर है । इस साधिक 2000 सागर काल को **त्रस-स्थिति** कहा जाता है। इस काल के भीतर जीव यदि मोक्ष प्राप्त नहीं करता है, तो वह पुन: निगोद / स्थावर अवस्था को प्राप्त हो जाता है ।

इस त्रस-स्थिति में यह जीव नारकी, तिर्यंच, मनुष्य और देव बनता है । तब एक प्रश्न उत्पन्न होता है कि एक त्रस-स्थिति में मनुष्य भव एक जीव को कितनी बार प्राप्त हो सकता है । प्रकृत में इसी विषय के बारे में आगमानुसार विचार करना है ।

इसके बारे में आम धारणा प्रचलित है कि एक त्रस-स्थिति में 48 बार ही मनुष्य बना जा सकता है । इन 48 भवों में भी 24 पर्याप्त के भव एवं 24 अपर्याप्त के भव होते हैं । इन 24-24 भवों में पुन: 8 पुरुष के, 8 स्त्री के एवं 8 नपुंसक के होते हैं । अर्थात् निम्न 3 बातें इस संबंध में प्रचलित हैं-

1. एक त्रस-स्थिति में 48 ही मनुष्य भव होते हैं और
2. इन 48 में से 24 अपर्याप्त के होते हैं, जो कि स्त्री, पुरुष और नपुंसक में बंटे होते हैं।
3. इन 48 में से 24 पर्याप्त के होते हैं, जो कि स्त्री, पुरुष और नपुंसक में बंटे होते हैं।

परन्तु यह कथन समीचीन नहीं है । क्योंकि प्रथम तो 24 अपर्याप्त के भवों में पुरुष व स्त्री वेद हो ही नहीं सकता । अपर्याप्त मनुष्य सम्मूर्छन ही होते हैं एवं सम्मूर्छन मनुष्य नपुंसक ही होते हैं—ऐसा आगम का कथन है (गोम्मटसार जीवकांड गाथा – 92, 93) । अत: 24 अपर्याप्त भवों में पुरुष, स्त्री वेद कहना ही संभव नहीं । अतः उपर्युक्त दो कथनों में से द्वितीय तो बनता ही नहीं है। यह स्वत: ही आगम-विरुद्ध है।

अब रही बात एक त्रस-स्थिति में 48 भव ही प्राप्त होने की, तो किसी भी आगम ग्रन्थ में इस बात का उल्लेख नहीं है कि त्रस-स्थिति में मनुष्य के 48 ही भव प्राप्त होते हैं, अधिक नहीं। बल्कि युक्ति से विचार करने पर ये 48 से अधिक भव भी सिद्ध होते हैं।

प्रश्न: सर्वार्थसिद्धि ग्रन्थ में कहा है कि मनुष्य के 48 भव होते हैं। देखिये सूत्र 1/8 की टीका ।

उत्तर: वहां भी 48 भव नहीं कहें हैं बल्कि यह कहा है कि मनुष्य के 49 भव होते हैं! फिर उस प्रकरण को पूरा देखिये। यह कथन काल प्ररूपणा के अंतर्गत एक जीव की अपेक्षा उत्कृष्ट काल का है । याने एक जीव मनुष्य बने, फिर मरण कर पुन: मनुष्य बने, फिर मरण कर पुन: मनुष्य बने, तो इस प्रकार कितनी बार वह पुन:-पुन: मरकर मनुष्य बन सकता है, तो उसका निर्देश देते हुए यह कहा है कि 24 बार पूर्वकोटि आयु वाला, फिर 1 बार अपर्याप्त भव, फिर 23 बार पूर्वकोटि आयु वाला एवं 1 बार तीन पल्य की आयुवाला होकर यह जीव 47 पूर्वकोटि अधिक 3 पल्य प्रमाण काल तक (47 पूर्वकोटि + 3 पल्य प्रमाण + अंतर्मुहूर्त) मनुष्य बना रह सकता है । प्रमाण के लिए देखिये — सर्वार्थसिद्धि 1 / 8 एवं धवला पु. 4 / 1,5,70 / पृष्ठ 373 । ध्यान दें कि यहाँ पर मनुष्य गति का एक जीव की अपेक्षा काल का प्रमाण

बताया गया है; ना कि पूरी त्रस-स्थिति में मनुष्य भवों की संख्या । मनुष्यों में लगातार उत्पत्ति के भव ४८ + १ = ४९ हो सकते हैं; इससे अधिक नहीं – यह यहाँ पर कहा गया है ।

अब तक के उल्लेख से यह सिद्ध हुआ कि मनुष्य भव के बारे में जो प्रचलित विचार हैं, वे आगम के अनुकूल नहीं हैं। तो फिर कितने मनुष्य भव संभव हैं, इसका विचार आगम के आलोक में करते हैं ।

इसे निकालने हेतु धवल-7 के 'एक जीव अपेक्षा अंतरानुगम' का यह सूत्र उपयोगी है । एक जीव त्रस पर्याय को प्राप्त करके तिर्यंच अवस्था में ना जाये – इसका अधिकतम अन्तर बताते हुए धवला पु. 7, पृष्ठ 189 में कहा है कि

सूत्र: उक्कस्सेण सागरोवमसदपुधत्तं । 7 ।

अर्थ: अधिक से अधिक सागरोपमशतपृथक्त्व काल तक तिर्यंच जीवों का तिर्यंच गति से अंतर पाया जाता है।

इसका तात्पर्य यह है कि कोई एक जीव तिर्यंच गति से निकला तथा पुन: तिर्यंच के भव धारण ना करे, तो अधिकतम पृथक्त्व सौ सागर तक तिर्यंच गति में नहीं जाएगा, उसके पश्चात् नियम से तिर्यंच गति में उत्पन्न होगा । पृथक्त्व का अर्थ सामान्यतया 3 से 9 तक की संख्या ली जाती है । हम यहाँ न्यूनतम भी लें, तो सागरोपमशतपृथक्त्व याने 300 सागरोपम । इतने अधिकतम काल तक कोई एक जीव तिर्यंच में पैदा नहीं हो – ऐसा संभव है । यह एक जीव अपेक्षा तिर्यंच गति का उत्कृष्ट अंतर कहलाता है। अब इन 300 सागरों में वह नरक, मनुष्य एवं देव ही बनेगा, तिर्यंच नहीं ।

इस जीव को 6 सागर आयु सहित सानत्-माहेन्द्र युगल में उत्पन्न कराया जावे, वहाँ से मरण कर मनुष्य बने । क्योंकि देवों से मरण कर मनुष्य एवं तिर्यंच में ही उत्पन्न होता है । अब तिर्यंच में उत्पत्ति का तो अन्तर चल रहा है, अत: वहाँ उत्पन्न होगा नहीं, तो शेष बची मनुष्य गति में ही उत्पन्न हुआ । यहाँ मनुष्य बनकर पुन: उसी स्वर्ग में 6 सागर की आयु वाला देव हुआ । वहाँ से मरणकर पुन: मनुष्य हुआ, ऐसा 300 सागर तक लगातार करे, तो उसके मनुष्य भव कितने होंगे ?

साधिक 6 सागर में एक मनुष्य भव होता है,
तो 300 सागर में कितने मनुष्य भव होंगे?
ऐसा त्रैराशिक करने पर $\frac{1\times 300 \text{ सागर}}{6 \text{ सागर}} = 50$ भव ।

याने 300 सागर के भीतर ही 50 मनुष्य भव हो गए । अभी त्रस-स्थिति में 1700 सागर का समय बाकी है, जिसमें और मनुष्य बनना शेष है । इससे यह सिद्ध हुआ कि एक त्रस-स्थिति में 48 बार ही मनुष्य भव नहीं मिलता, बल्कि उससे अधिक बार भी प्राप्त हो सकता है । कितने अधिक बार ? आइये, थोड़ा और भी विचार करते हैं ।

पूर्वोक्त उदाहरण में 6 सागर की आयु वाला देव बनाया था । अब इसी जीव को यदि 1 सागर आयु वाला सौधर्म-ईशान का देव बनाया जाए, तब कितने मनुष्य भव हो सकते हैं ? एक मनुष्य मरण कर 1 सागर आयु वाला देव हुआ, वहाँ से मरण कर मनुष्य बना, पुन: मरण कर देव बना, पुन: वहाँ मरण कर मनुष्य बना । ऐसा 300 सागर तक निरन्तर किया, तो कितनी बार मनुष्य बना ?

साधिक 1 सागर में एक मनुष्य भव होता है,

तो 300 सागर में कितने मनुष्य भव होंगे—
ऐसा त्रैराशिक करने पर $\frac{1\times300 \text{ सागर}}{1 \text{ सागर}}$ = 300 भव।

याने 300 सागर प्रमाण काल में एक जीव 300 बार मनुष्य बना ।

अब वैमानिकों में उत्पन्न करने की बजाए ज्योतिषी देवों में उत्पन्न करके भव निकालते हैं । क्योंकि ज्योतिषी देव सर्वाधिक हैं, अत: उनमें उत्पत्ति की संभावना भी अधिक है । ज्योतिष देव की उत्कृष्ट भी आयु एक पल्य है । 1 सागर में 10 कोड़ाकोड़ी पल्य होते हैं । तो 300 सागर में 300×10 कोड़ाकोड़ी पल्य होते हैं । इतने काल के भीतर एक मनुष्य मरणकर उत्कृष्ट आयु वाला ज्योतिष देव हुआ, वहाँ से मरणकर मनुष्य बना, पुन: मरणकर वैसा ही ज्योतिष देव हुआ, वहाँ से मरणकर पुन: मनुष्य हुआ । ऐसा निरंतर 300 सागर तक करे, तो कितने मनुष्य भव होंगे ?

साधिक 1 पल्य में एक मनुष्य भव होता है,
तो 300×10 कोड़ाकोड़ी पल्य में कितने मनुष्य भव होंगे?
ऐसा त्रैराशिक करने पर $\frac{1\times300\times 10 \text{ कोड़ाकोड़ी पल्य}}{1 \text{ पल्य}}$ = 300×10 कोड़ाकोड़ी मनुष्य भव ।

इससे कम आयु वाले देवों में उत्पन्न कर-कर के उत्पन्न करने पर और भी अधिक भव हो सकते हैं । ऊपर दिए गए कथन दृष्टांत मात्र हैं ।

प्रश्न: तो क्या इस प्रकार एक त्रस-स्थिति में मनुष्यों के असंख्यात भव भी हो सकते हैं? जैसे देवों में भवनवासी और व्यन्तरों की जघन्य आयु 10,000 वर्ष है । कोई मनुष्य मरणकर जघन्य स्थिति वाले व्यंतर देव में उत्पन्न हुआ, मरण कर मनुष्य में उत्पन्न हुआ, पश्चात् मरणकर पुन: व्यंतर देवों में जघन्य स्थिति वाला देव हुआ, मरणकर फिर मनुष्य हुआ । इस प्रकार निरन्तर करे, तो असंख्यात बार मनुष्य बन जाएगा ?

साधिक 10,000 वर्ष में एक मनुष्य भव होता है,
तो 300 सागर में कितने मनुष्य भव होंगे ?
ऐसा त्रैराशिक करने पर $\frac{1\times300 \text{ सागर}}{10000 \text{ वर्ष}}$ = असंख्यात भव ।

उत्तर: इस प्रकार असंख्यात भव संभव नहीं हैं । क्योंकि आगम का इस प्रकार का नियम है कि एक त्रस-स्थिति में त्रस के भव संख्यात ही होते हैं, असंख्यात नहीं । यह जयधवल में इस प्रकार कहा है :

जयधवल पुस्तक 15, पृष्ठ 124-125

३३५. 'एगादेगुत्तरियं' एवं भणिदे थावरकायादो आगंतूण भणुसेसुववज्जिय खवणाए अब्भुट्ठिदस्स एगतसभवसंचिददव्वं खवगसेढीए लब्भदि । एवं दो-तिण्णिआदिकमेण एगेगुत्तरवड्ढीए णिरंतरं तसभवग्गहणाणि वड्ढावेयव्वाणि जाव उक्कस्सेण तप्पाओग्ग संखेज्जमेत्तेसु तसभवेसु बद्धपदेसपिंडो खवगम्मि संचयसरूवेण लद्धो त्ति । तेण एगादिएगुत्तरकमेण णिरंतरं वड्ढिदेहिं तसभवग्गहणेहिं संखेज्जेहिं चेव बद्धकम्ममेदस्स खवगस्स लब्भदि, णादिरित्तमिदि सुत्तत्थणिच्छओ । एत्तो अहिययराणं भवग्गहणाणं तसट्ठिदीए अब्भंतरे संभवाणुवलंभावो । कम्मट्ठिदिअब्भंतरे एइंदियभवग्गहणेसु पुणो पुणो अंतराविय तसकाएसु उप्पाइज्जमाणे असंखेज्जेसु तसभवेसु

संचिददव्यमेदम्मि लब्भदे । ण चेदमसिद्धं, जहण्णपदेसविहत्तिसामित्तसुत्ते खविदकम्मंसियलक्खणे भण्णमाणे एइंदिएहिंतो आगंतूण संजमासंजमादिगुणसेढिणिज्जराकरणट्ठं तसकाइएसु उप्पण्णभववारा पलिदोममस्स असंखेज्जदिभागमेत्ता लब्भंति' त्ति परूविदत्तादो । तम्हा असंखेज्जेसु तसकाइयभवग्गहणेसु कम्मट्ठिदीए अब्भंतरे लब्भमाणेसु तेसिं संखेज्जभवपमाणत्तावहारणमेदं कथं घडदि त्ति ? ण एस दोसो, एगादिएगुत्तरकमेण णिरंतरमुवलब्भमाणाणं तसभवग्गहणाणं सुत्ते विवक्खियत्तादो |

३३५. 'एगादेगुत्तरियं' ऐसा कहने पर स्थावरकायिकों में से आकर और मनुष्यों में उत्पन्न होकर क्षपकश्रेणि पर आरूढ़ हुए जीव के एक त्रसभव में संचित हुआ द्रव्य क्षपकश्रेणि में पाया जाता है। इसी प्रकार दो, तीन भव आदि के क्रम से आगे एक-एक को वृद्धि द्वारा निरन्तर उतने त्रसभव-ग्रहणों को बढ़ाना चाहिए जहाँ जाकर उत्कृष्ट से तत्प्रायोग्य संख्यात त्रसभवों में बद्ध पूर्वसंचित प्रदेशपिण्ड क्षपक के संचयरूपसे पाया जाता है । इसलिए एक से लेकर उत्तरोत्तर एक-एक की वृद्धि क्रम से निरन्तर वृद्धि को प्राप्त हुए संख्यात त्रसभव-ग्रहणों के द्वारा ही बद्ध कर्म इस क्षपक के प्राप्त होते हैं, अधिक नहीं यह - इस सूत्र के अर्थ का निश्चय है, क्योंकि इनसे अधिक भवग्रहणों की त्रसस्थिति के भीतर सम्भावना नहीं पायी जाती है ।

शंका - कर्मस्थिति के भीतर एकेन्द्रिय भवग्रहणों का पुनः पुनः अन्तर कराकर त्रसकायिकों में उत्पन्न कराने पर असंख्यात त्रसभवों में संचित हुआ द्रव्य इस क्षपक के पाया जाता है । और यह कथन असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि जघन्य प्रदेशविभक्ति के स्वामित्व-विषयक सूत्र में क्षपितकर्मांशिक लक्षण का कथन करने पर एकेन्द्रियों में से आकर संयमासंयमादि गुणश्रेणिनिर्जरा को करने के लिए त्रसकायिकों में उत्पन्न होने के भवबार पल्योपम के असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होते हैं - ऐसा प्ररूपण किया गया है। इसलिए जब कि असंख्यात त्रसकायिक सम्बन्धी भवग्रहण कर्मस्थिति के भीतर प्राप्त होते हैं ऐसी अवस्था में यहाँ पर उनके संख्यात भवों का यह अवधारण करना कैसे घटित होता है ?

समाधान - यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि एक से लेकर एक-एक अधिक के क्रम से निरन्तर उपलभ्यमान त्रससम्बन्धी भवग्रहणों को यहाँ सूत्र में विवक्षित किया है ।

अतः एक त्रस-स्थिति में मनुष्य के भव संख्यात ही हो सकते हैं, असंख्यात नहीं ।

प्रश्न: व्यंतर जीव तो मरकर एकेंद्रिय बनते हैं जैसा कि कहा है – '***तहतै चय थावर तन धरे, यों परिवर्तन पूरे करें***' ।

उत्तर: यह कोई नियम नहीं है कि व्यंतर मरणकर एकेंद्रिय ही बनेंगे । यदि वे हीन दशा को प्राप्त होंवे, तो एकेंद्रिय में जन्म लेते हैं परन्तु उच्च दशा प्राप्त करें, तो संज्ञी पंचेन्द्रिय मनुष्य भी बनते हैं ।

प्रश्न: तो उन्हें एकेंद्रिय पर्याय में क्यों प्राप्त नहीं कराया गया? क्योंकि इस बात के अवसर अधिक हैं कि वे एकेंद्रिय में जाएँ क्योंकि वे भोगों में अधिक लीन रहते हैं ?

उत्तर: यह ठीक है कि उनकी एकेंद्रिय अथवा पंचेद्रिय तिर्यंच बनने की संभावना अधिक है । पर यह जो काल निकाला जा रहा है वह तिर्यंच गति में उत्पन्न होने को छोड़कर है । याने इस पृथक्त्वशत सागरोपम काल पर्यंत यह जीव तिर्यंचों में उत्पन्न ही नहीं होगा । उसकी अपेक्षा एकेंद्रिय व पंचेन्द्रिय तिर्यंच में जन्म नहीं कराया है ।

प्रश्न: जीव संख्यातों बार मनुष्य बना, तो यह अपर्याप्त मनुष्य की अपेक्षा होगा । पर्याप्त मनुष्य तो 48 बार ही बनता है ।

उत्तर: नहीं, यह पर्याप्त मनुष्य भवों की संख्या है, अपर्याप्त की नहीं । क्योंकि यह नियम है कि देवों और नारकीयों से च्युत होकर जीव पर्याप्त भव ही धारण करता है, अपर्याप्त नहीं । तथा जो मनुष्य; देवों में उत्पन्न हुआ है वह भी पर्याप्त मनुष्य ही हुआ है क्योंकि अपर्याप्त जीव तो मरकर देवों में या नरक में पैदा नहीं होते ।

प्रश्न—ऐसा संभव नहीं है कि बार-बार देवों में उत्पन्न होवे ?

उत्तर—क्यों संभव नहीं है ? क्या आगम से विरोध आता है या युक्ति से? विचार करने पर दोनों से ही विरोध नहीं आता। एक जीव नरक में निरंतर कितनी बार उत्पन्न होवे, इसका आगम में उल्लेख है। परन्तु देवों में इतनी बार ही उत्पन्न होवे इसका आगम में वर्णन नहीं है । जो नियम रूप कथन हैं, वे ही विशेषतया बताये जाते हैं । अत: देवों में निरंतर इस प्रकार उत्पन्न हो सकता है ।

प्रश्न—धवला पु. 9, पृष्ठ 296 में बताया है कि पहले सौधर्म कल्प से अंतिम कल्प में चार-चार बार ही उत्पन्न होवे । तब यह आपका कथन कैसे ठीक बैठेगा ?

उत्तर—वहीं धवला पु. 9 में पृष्ठ 295 पर देखिए । वहाँ आचार्य वीरसेन स्वामी ने ही कहा है कि पंचेन्द्रिय में उत्पन्न होने का यही प्रकार नहीं है, अन्य प्रकार से भी संभव है । याने प्रथम कल्प में 4 बार ही उत्पन्न होवे, इसका नियम नहीं है ।

प्रश्न—फिर भी लगातार ज्योतिषी में ही या व्यंतरों में ही उत्पन्न होकर जीव मनुष्य बने, ऐसा नहीं लगता ?

उत्तर—लगातार एक ही कल्प, ज्योतिषी या व्यंतरों में उत्पन्न ना कराना हो, तो भी कोई बात नहीं । कल्पों एवं व्यंतरों में बदल-बदल कर उत्पन्न कराने पर भी संख्यातों भव बन जाते हैं । यथा—मनुष्य मरणकर 6 सागर आयु वाला देव हुआ, फिर मरणकर मनुष्य बना, फिर 1 सागर आयु वाला देव हुआ, फिर मरणकर मनुष्य बना, फिर 1 पल्य आयु वाला ज्योतिष देव बना, फिर मरणकर मनुष्य बना, फिर मरण कर 10000 वर्ष आयु वाला व्यंतर बना, फिर मरणकर मनुष्य बना । पुन: मरणकर 6 सागर आयु वाला देव बना । इत्यादि प्रकार से घुमाने पर भी संख्यातों भव मनुष्य के सिद्ध हो जाते हैं, जो कि प्रचलित 48 भवों से अधिक ही हैं ।

प्रश्न—बार-बार इतना अधिक काल देवों में रहना संभव नहीं है ?

उत्तर—बिल्कुल संभव है । बल्कि त्रस-स्थिति में जीव अधिक बार देव में ही रहता है । सामान्य कथन से यह भी कहा है कि 2000 सागर में से 1300 सागर देवों में, शेष 700 सागर नरकों में एवं साधिक काल मनुष्य, तिर्यंच में बीतता है ।

प्रश्न—निरंतर देवों में ही क्यों उत्पन्न कराया, नारकियों में क्यों नहीं ?

उत्तर—सुगमता के लिए समझने के लिए देवों ही उत्पन्न कराया है । अन्यथा बदल-बदल कर नारकियों में भी उत्पन्न कराया जा सकता है । उसमें भी संख्यात भव इसी प्रकार सिद्ध होते हैं । विशेष इतना है कि जब नारकी में उत्पन्न होने के लगातार भव समाप्त हो जाएं, तो उसे देव में उत्पन्न कराना चाहिए ।

प्रश्न—क्या किसी अन्य प्रमाण से भी जाना जा सकता है कि मनुष्यों के भव 48 से अधिक होते हैं ?

उत्तर—हाँ, पुरुष वेद के काल से भी यह सिद्ध होता है ।

धवल पु. 9, पृ. 299

इत्थि-पुरिस-णवुंसयवेदेसु तिण्णिपदा केवचिरं कालादो होंति ? णाणाजीवं पडुच्च सव्वद्धा। एगजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमओ, अंतोमुहुत्तं, एगसमओ; उक्कस्सेण पलिदोवमसदपुधत्तं, सागरोवमसदपुधत्तं, अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा ।

अर्थ: स्त्री, पुरुष व नपुंसक वेदियों में तीनों पदवाले कितने काल तक रहते हैं ? नाना जीवों की अपेक्षा सर्व काल रहते हैं। एक जीव की अपेक्षा जघन्य से क्रमशः एक समय, अन्तर्मुहूर्त व एक समय तथा उत्कर्ष से पल्योपमशतपृथक्त्व, सागरोपमशतपृथक्त्व व असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन मात्र अनन्त काल तक रहते हैं।

अर्थात् पुरुषवेदी का उत्कर्ष काल सागरोपमशत पृथक्त्व है। इसका स्पष्टीकरण करके यहीं आगे कहा है कि कोई पुरुषवेदी जीव असुरकुमारों में 3 बार, सौधर्मादिक आठ कल्पों में 6-6 बार एवं नव-ग्रैवेयक में 3-3 बार उत्पन्न होता है । इनके भवों की गणना की जाए, तो

असुरकुमार के	3
8 कल्पों में प्रत्येक के 6-6	6×8 = 48
अधो ग्रैवेयक के	3
मध्य ग्रैवेयक के	3
ऊर्ध्व ग्रैवेयक के	3
कुल देव भव	**60 भव**

इन 60 देवों के भवों से च्युत होकर कोई पुरुषवेदी मनुष्य बने, तब उसके 60 मनुष्य भव सिद्ध होते हैं । और यह भी मात्र 900 सागर के काल के भीतर, अभी शेष त्रस-स्थिति बाकी है। कोई कहे कि इसमें देव से च्युत होकर मनुष्य बनने का निर्देश नहीं है, तो हम कहते हैं कि उसका निषेध भी नहीं है । अत: इस प्रकार से भी आगम विरुद्ध 48 भवों की मनुष्य भव वाली कथनी नहीं ठहरती ।

प्रश्न: फिर भी ऐसा लगता नहीं कि ऐसा संभव है कि मनुष्य भव इतनी अधिक बार प्राप्त हो सकता है?

उत्तर: अरे भाई, इसमें हमारे तुम्हारे लगने, नहीं लगने का कोई प्रश्न नहीं है। आगम के कई उल्लेख ऐसे हैं जो हम कल्पना भी नहीं कर सकते कि ऐसा संभव भी है, परन्तु फिर भी वैसा संभव है क्योंकि आगम वैसा कह रहा है। उदाहरण के लिए एक क्षपित कर्मांशिक जीव का स्वरूप बताते हुए धवल पु. 10 / पृष्ठ 294 में कहा है कि

1. कोई कोटि पूर्व आयु वाला मनुष्य संयम प्राप्त करके जीवन-पर्यंत रहे
2. आयु के अंत में मिथ्यात्व को प्राप्त कर देवों में 10,000 वर्ष की आयु वाला व्यंतर देव बने
3. वहां पुनः सम्यक्त्व प्राप्त करके, अनंतानुबन्धी की विसंयोजना करके, जीवन के अंत में पुनः मिथ्यात्व को प्राप्त हुआ
4. मरण कर बादर पृथ्वीकायिक एकेंद्रिय में उत्पन्न होकर सूक्ष्म निगोदिया एकेंद्रिय में उत्पन्न हुआ
5. वहां पल्य का असंख्यातवा भाग बिताया।
6. वहां से निकलकर मनुष्य बनकर **उपशम श्रेणी** को प्राप्त किया

6 और पुनः जीवन के अंत में मिथ्यात्व प्राप्त कर उपर्युक्त क्रम से सूक्ष्म निगोदिया एकेंद्रिय में उत्पन्न हुआ।

7. वहां से निकलकर मनुष्य बनकर फिर से उपशम श्रेणी को प्राप्त किया। इस प्रकार की उपशम श्रेणी 4 बार प्राप्त की।
8. इसके बाद जब सूक्ष्म निगोद एकेंद्रिय से निकला, तो मात्र संयम प्राप्त करके रहा। ऐसा भी एक कम संयमकांडक बार किया (याने 31 बार)
9. इसके बाद जब सूक्ष्म निगोद एकेंद्रिय से निकला, तो पल्य के असंख्यात भाग बराबर उपशम सम्यक्त्व प्राप्त किया ।
10. इसके बाद जब सूक्ष्म निगोद एकेंद्रिय से निकला, तो पल्य के असंख्यात भाग बराबर अनंतानुबन्धी का विसंयोजन किया।
11. जब सूक्ष्म निगोद एकेंद्रिय से निकला, तो पल्य के असंख्यात भाग बराबर क्षायोपशमिक सम्यक्त्व प्राप्त किया।
12. इसके बाद जब सूक्ष्म निगोद एकेंद्रिय से निकला, तो पल्य के असंख्यात भाग बराबर देशसंयम प्राप्त किया।
13. इसके बाद अंत में पुनः मनुष्य भव प्राप्त करके अंतिम बार संयम धारण करके मोक्ष को प्राप्त किया।

क्या हम ऐसा सोच भी सकते हैं कि कोई जीव इतने उत्कृष्ट परिणाम करके पुनः पुनः निगोद को प्राप्त कर सकता है!! लेकिन फिर भी किसी जीव की अपेक्षा यह संभव है। उसी प्रकार मनुष्य के इतने अधिकतम भव भी किसी जीव की अपेक्षा संभव हैं।

ऐसा सिद्ध हो जाने पर तो मनुष्य भव की दुर्लभता ही समाप्त हो जाएगी ? ऐसी आशंका भी नहीं करना चाहिए क्योंकि यह उत्कृष्ट अपेक्षा से किया गया कथन है । सभी जीव इतने अधिक भवों को प्राप्त करें ही यह कोई नियम नहीं। जैसे कि साधिक 2000 सागर की त्रस-स्थिति हर जीव प्राप्त करे यह नियम

नहीं है । दूसरी बात - करोड़ों मनुष्य भव मिलने पर भी वह तिर्यंच गति के अनंतों भवों के आगे नगण्य ही हैं, अत: दुर्लभता बनी रहती है ।

और यदि विरुद्ध बात से ही मनुष्य भव को दुर्लभ बताना है, तो हमसे भी अधिक दुर्लभ तो ईसाई एवं मुस्लिम बता रहे हैं कि एक ही मनुष्य भव है आपके पास, उसके बाद नियम से स्वर्ग या नरक में ही जाना होगा । तो क्या हम उसे मान लें या वैसा प्रसारित करें !! कतई नहीं । अत: आगम के आधार से सत्य जानकर वैसा मानना एवं कहना चाहिए ।

प्रश्न: मनुष्य भव 48 से अधिक कई हजारों संख्यात भी हो सकते हैं – इसे जानने का क्या लाभ है?

उत्तर: यह वस्तु-स्वरूप के सम्यक बोध है । एक त्रस-स्थिति में मात्र 48 ही मनुष्य भव नहीं होते, बल्कि अधिक होते हैं – यह सम्यग्ज्ञान होना एवं तत्संबंधी अज्ञान दूर होना इसका लाभ है ।

प्रश्न: यदि हम प्रचलित धारणानुसार 48 ही मनुष्य भव मानें तो?

उत्तर: यह तो पूर्वोक्त आगम कथन से ही सिद्ध हुआ है कि 48 भव तो लगातार मनुष्य वाले भव कहे हैं। यदि हम आम धारणानुसार मानते हैं तो यह विरुद्ध ज्ञान हुआ, इसे समीचीन ज्ञान नहीं कह सकते । पूर्व में अज्ञानवश या विपरीत उपदेश को सुनकर माना था, तब तक तो कोई दोष नहीं । परन्तु आगम देख लेने पर भी विपरीत मानना अज्ञान और पक्षपात से भरा है ।

प्रश्न— आगम में इसका स्पष्ट उल्लेख क्यों नहीं कि मनुष्य के भव 48 ही नहीं होते हैं, इससे अधिक भी होते हैं ?

उत्तर—आगम में इसका निषेध नहीं है, यही आगम का उल्लेख है। जहां विशेष नियम होते हैं, उनका उल्लेख किया जाता है । जैसे नरक में निरंतर उत्पत्ति का कथन, किसके कौन-सा संहनन आदि । जहां सामान्य बात है, उसको पृथक् उल्लेख की आवश्यकता नहीं है ।

अंतिम प्रश्न—यदि आगम इस प्रकार का है, तो अभी तक विरुद्ध कैसे प्रसारित हो गया ? तो यह इतिहास का विषय है कि कब किसके द्वारा विपरीत समझ बन जाने एवं उसकी महिमा आने से यह प्रचारित हुआ । परन्तु हम अभी यह समझें, विचार करें, आगम को देखें एवं सत्य को स्वीकार करें ।

निष्कर्ष:

1. एक त्रस-स्थिति में 48 मनुष्य भवों में 24 अपर्याप्त के होते हैं – यह मान्यता आगम-विरुद्ध है।
2. एक त्रस-स्थिति में 48 ही मनुष्य भव होते हैं, इसका कोई भी आगम प्रमाण नहीं है। मात्र काल्पनिक रूप से प्रचलित है।
3. एक त्रस-स्थिति में 48 से अधिक भव आगम-अविरोध से सिद्ध होते हैं।

इस सम्पूर्ण लेख में यदि कुछ भी आगम विरुद्ध दिखाई देता हो, तो सुधीजन कृपया अवश्य अवगत करायें, ताकि हम उसे दूर कर सकें ।

—विकास जैन (छाबड़ा), इन्दौर

vikasnd@gmail.com